International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 05, No. 03(II), July - September, 2023, pp. 37-43

कृषि के सतत विकास में जैविक खेती का योगदान

डॉ. बाबूलाल मीना*

प्रस्तावना

भारत धीरे–धीरे लेकिन लगातार जैविक खेती की ओर बढ़ रहा है। सतत ग्रामीण विकास में इसके योगदान की अपार संभावनाएं हैं। ग्रामीण युवाओं के रोजगार के लिए एक महान अवसर जैविक उत्पादों और आदानों के उत्पादन, प्रसंस्करण और विपणन में मौजूद है। हालांकि, जैविक खेती में किसानों और अन्य हितधानकों को कई प्रकार की बाधाओं का सामना करना पड़ता है और इनको दूर करना भी महत्वपूर्ण है।

देश के समुचित उत्थान के लिए सतत ग्रामीण विकास आवश्यक है। एक तरफ तो ग्रामीण खुशहाली एवं विकास जरूरी है तो दूसरी तरफ इस सतत विकास को बनाए रखने के लिए सीमित प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग एवं संरक्षण भी आवश्यक है। यदि ये प्राकृतिक संसाधन समाप्त हो गए अथवा उनका अधिक दोहन हुआ तो विश्व खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है।

प्रमुख प्राकृतिक संसाधन हैं– भूमि, जल, वायु, वन और वन्यजीव, आदि। विभिन्न मानव सभ्यताओं के विकास में उपरोक्त प्राकृतिक संसाधनों का विशेष योगदान रहा है। इन संसाधनों के समुचित उपयोग से मानव सभ्यताएं विकसित होती रही हैं और इनके दुरूपयोग से नष्ट भी हुई हैं। वर्तमान में विश्व के कुछ देशों जैसे चीन और भारत, आदि में मानव और पशु जनसंख्या बहुत तेजी से बढ़ी है जिसके कारण मानव आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन किया गया है। प्राकृतिक संसाधनों के कृषि एवं अन्य क्षेत्रों में अत्यधिक दोहन से अनेक समस्याओं का जन्म हुआ है। कुछ क्षेत्रों अथवा दशाओं में कृषि उत्पादन के अंतर्गत रासायनिक कीटनाशियों का अविवेकपूर्ण एवं अंधाधुंध प्रयोग किया गया है जिसके अनेक दुष्परिणाम सामने आए हैं। जल, वायु, मृदा और यहां तक कि विभिन्न खाद्य पदार्थ भी दूषित हो चुके हैं। मृदा, जल और वायु की गुणवत्ता में काफी गिरावट आ चुकी है जिससे वर्तमान कृषि उत्पादन की सतत्ता बनाए रखना अत्यधिक कठिन प्रतीत होता है।

फसल उत्पादन में प्रयुक्त कारकों (उपदानों) की उत्पादकता में गिरावट एक गंभीर चुनौती बनकर सामने आ रही है। जो उपज बीस वर्ष पहले उर्वरक का एक कट्टा डालकर मिलती थी अब वही उपज उर्वरक के दो कट्टे डालकर मिलती है। इसी प्रकार पीड़कों (पेस्ट्स) के नियंत्रण के लिए अब रसायनों का पहले की तुलना में अधिक छिड़काव करना पड़ता है। इससे फसल उत्पादन की लागत बढ़ जाती है जिसके परिणामस्वरूप प्रक्षेत्र आय में कमी आ जाती है। साथ ही, अनेक प्रकार के जलवायु परिवर्तनों के कुप्रभावों के कारण भी कृषि उत्पादन प्रभावित हो रहा है और खेती से प्राप्त आमदनी घट रही है। कृषि में परंपरागत विधियों को अपनाने के कारण जैव–विविधता में लगातार में लगातार कमी आ रही है। फसलों के विविधीकरण में कमी आई है जिसके कारण मृदा की आंतरिक जैव–विविधता में भी कमी आई है। साथ ही, मृदा में कृत्रिम रसायनों के प्रयोग के कारण भी इसमें उपस्थित जैव विविधता में कमी आई हे। मृदा के उपयुक्त स्वास्थ्य एवं आवश्यक पोषक तत्वों के चक्रीकरण के लिए जैव विविधता को बनाए रखना बेहद जरूरी होता है।

रासायनिक (परंपरागत) खेती से उत्पादित बहुत से खाद्य–पदार्थों में कीटनाशियों एवं अन्य जहरीले रसायनों के अवशेष मिल रहे हैं। कई बार तो इन अवशेषों का स्तर खाद्य पदार्थों में अनुमत सीमा से भी कई गुना अधिक होता है। इस तरह के खाद्य पदार्थों का लगातार उपभोग करने से जानवरों एवं मनुष्यों में कई प्रकार के असाध्य रोग आ जाते हैं।

* सहायक आचार्य भूगोल, राजकीय महाविद्यालय, कोटपूतली, जयपुर, राजस्थान।

क्या है जैविक खेती

जैविक खेती कृषि की वह विधि है जिसमें संश्लेषित उर्वरकों, संश्लेषित कीटनाशियों (कीटनाशी, कवकनाशी, जीवाणुनाशी, शाकनाशी) और कृत्रिम वृद्धि नियामकों का प्रयोग सर्वथा वर्जित रहता है। साथ ही, ट्रांसजैनिक (पराजीनी) फसलों अथवा उनकी किस्मों का प्रयोग भी वर्जित होता है। बाह्य निवेशों का न्यूनतम प्रयोग एवं फार्म पर उत्पादित निवेशों का अधिकतम प्रयोग किया जाता है। तथा भूमि की उर्वराशक्ति को बनाए रखने अथवा उसकी वृद्धि पर बल दिया जाता है। इसके लिए फसल चक्र, हरी खाद, कम्पोस्ट आदि के प्रयोग पर बल दिया जाता है। जैविक खेती से फसल, मानव, मृदा और पर्यावरण स्वास्थ्य में वृद्धि एवं टिकाऊपन आता है।

विश्व और भारत में जैविक खेती

वर्तमान में जैविक खेती विश्व के लगभग 181 देशों में 698 लाख हेक्टेयर भूमि पर 29 लाख कृषकों द्वारा की जा रही है (वर्ष 2017)। भारत में भी जैविक खेती का विस्तार हो रहा है। वर्ष 2017–18 में भारत में जैविक खेती के अंतर्गत कुल 35.6 लाख हेक्टेयर प्रमाणित क्षेत्र था जिसमें से 17.8 लाख हेक्टेयर वन्य अथवा जंगली क्षेत्र और उतना ही (7.8 लाख हेक्टेयर) कर्षित क्षेत्र था। र्ष 2017–8 में 17 लाख टन जैविक उत्पादों का उत्पादन किया गया। मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, उत्तराखंड, केरल, कर्नाटक, असम, सिक्किम और अन्य उत्तर–पूर्वी राज्य जैविक खेती को अपनाने वाले प्रमुख राज्य हैं। इसमें सोयाबीन, कपास, गन्ना, तिलहन, दलहन, बासमती धान, मसाले, चाय, फल, सूखे फल, सब्जियां, कॉफी और उनसे प्राप्त मूल्य–संवर्धित उत्पाद शामिल हैं। देश से जैविक पदार्थो के निर्यात में भी धीरे–धीरे वृद्धि हो रही है।

भारत ने वर्ष 2017–18 में 4.58 लाख टन जैविक उत्पादों का विभिन्न देशों को निर्यात किया। इन जैविक उत्पादों में मुख्य रूप से तिलहन (47.6 प्रतिशत), धान (अन्न) एवं मोटे अनाज (10.4 प्रतिशत), रोपण फसलें जैसे चाय एवं कॉफी (8.96 प्रतिशत), शुष्क फल (8.88 प्रतिशत), मसाले (7.76 प्रतिशत), एवं अन्य। यह निर्यात अमेरिका, यूरोपियन संघ, कनाड़ा, स्विट्जरलैंड, कोरिया, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिणी अफ्रीका, इजराइल एवं वियतनाम आदि देशों को किया गया। वर्ष 2017–18 में निर्यात किए गए जैविक उत्पादों का कुल मान 3453.48 करोड़ रूपये था। भविष्य में जैविक पदार्थों के अंतर्गत क्षेत्रफल बढ़ने की अपार संभावनाएं हैं जिससे कि इन पदार्थों का उत्पादन एवं निर्यात बढ़ेगा और देश अधिक मात्रा में विदेशी मुद्रा का अर्जन कर पाएगा। इससे निश्चित तौर पर ग्रामीण विकास मे भी मदद मिलेगी। जैविक खेती से संबंधित विभिन्न आंकड़ों का उल्लेख सारणी–1 में किया गया है।

जैविक खेती एवं सतत कृषि विकास

इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारत में ग्रामीण विकास के लिए कृषि का विकास आवश्यक है क्योंकि भारत एक कृषि प्रधान देश है। यह तय है कि भारत में कृषि विकास के बिना ग्रामीण विकास संभव नहीं है। इसके पीछे एक प्रमुख कारण यह भी है कि देश की लगभग दो–तिहाई से अधिक आबादी आज भी गांवों में निवास करती है और अधिकतर लोगों की जीविका का आधार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि ही है। इस दशा में जैविक खेती को अपनाकर बहुत–सी समयस्याओं का सामना सफलतापूर्वक किया जा सकता है। कुछ लोग जैविक खेती की अक्सर कम पैदावार के लिए आलोचना भी करते हैं। उनके मतानुसार बढ़ती आबादी को यह खेती पर्याप्त मात्रा में खाद्य–पदार्थों की आपूर्ति करने में सक्षम नहीं होगी। हालांकि, सवाल यह नहीं है कि हम कल को पूरी दुनिया को जैविक खेती में बदल दें, लेकिन हमारी मौजूदा खाद्य–प्रणाली से जुड़ी बड़ी चुनौतियों का सामना कैसे करेंगे। जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता हानि, पानी की कमी, गरीबी और कुपोषण आदि कुछ ऐसी चुनौतियां हैं जो दिनांदिन बढ़ती ही जा रही हैं। इन समस्याओं के समाधान में जैविक खेती महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। अतः जैविक खेती से संबंधित प्रमुख पहलुओं एवं मिथकों पर विस्तार से चर्चा करना आवश्यक हो जाता है।

फसल उत्पादकता

विश्व और भारत में किए गए अनेक कृषि अनुसंधान परिणामों से ज्ञात हुआ है कि परंपरागत खेती की तुलना में जैविक खेती से उत्पादन मे लगभग 10–35 प्रतिशत तक गिरावट आती है, विशेषकर आरंभ के 2 से 3 रूपांतरण वर्षों में। वर्षा–आधारित (बारानी) क्षेत्रों में सिंचित क्षेत्रों की तुलना में जैविक उत्पादन में बहुत ही कम कमी आती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि बारानी क्षेत्रों में पहले से ही आधुनिक निवेशों, (कृत्रिम उर्वरक एवं रसायन) का प्रयोग न के बराबर होता रहा है और साथ ही, जैविक खेती अपनाने से मृदा में जैव पदार्थ बढ़ता है जिससे फसलों की सूखा सहने की क्षमता में बढ़ोतरी होती है और फसल उत्पादन प्रभावित नहीं होता है। कुछ ऐसी भी रिपोर्ट्स हैं कि दीर्घकाल में यह उत्पादन अंतर

और कम हो जाता है। बहुत से अनुसंधान परिणामों में परंपरागत और जैविक कृषि की पैदावार में कोई अंतर नहीं पाया गया है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली में जैविक खेती पर बासमती धान–गेहूं फसल चक्र पर दीर्घकालिक अनुसंधान किए गए। परिणामों में पाया गया कि जैविक विधि से उगाए गए बासमती धान की दस वर्षों की औसत उपज 4.5 टन/हेक्टेयर थी, जबकि परंपरागत विधि से बासमती धान उगाने पर लगभग इतनी ही उपज प्राप्त होती है। मोदीपुरम, मेरठ (उत्तर प्रदेश) के द्वारा जैविक खेती पर देश के विभिन्न राज्यों में एक नेटवर्क परियोजना चलाई जा रही है, जिसके 8 फसल–चक्रीय वर्ष पूर्ण हो चुके हैं। इस परियोजना के 8 फसल–चक्रीय वर्ष पूर्ण होने पर मुख्य रूप से निम्नलिखित परिणाम प्राप्त किए गए हैं।

- बासमती धान, सोयाबीन, लहसुन, मूंगफली, फूलगोभी और टमाटर फसलों की जैविक खेती से प्राप्त उपज परंपरागत खेती से प्राप्त उपज से 4 से 6 प्रतिशत अधिक थी।
- मूंग, प्याज, मिर्च, बंदगोभी और हल्दी फसलों की जैविक खेती से प्राप्त उपज परंपरागत खेती से प्राप्त उपज से 7 से 14 प्रतिशत अधिक थी।
- गेहूं, सरसों, मसूर, आलू और राजमा की फसलों की जैविक खेती से प्राप्त उपज परंपरागत खेती से प्राप्त उपज से 5 से 8 प्रतिशत कम थी।
- 6 वर्षों में जैव–कार्बन की मात्रा जैविक खेती करने से 22 प्रतिशत बढ़ गई।
- जैविक खेती करने से परियोजना के सभी केंद्रों पर सूक्ष्म–जीवों की संख्या में वृद्धि पाई गई।

जैविक उत्पादों की गुणवत्ता

यह सिद्ध हो चुका है कि परंपरागत खेती से प्राप्त उत्पादों की तुलना में जैविक उत्पादों की गुणवत्ता बेहतर होती है। कुछ अनुसंधान परिणामों के आंकड़े उपलब्ध हैं। जैविक खेती से प्राप्त उत्पादों की गुणवत्ता का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है –

- जैविक पदार्थों में अधिक शुष्क पदार्थ, खनिज और आक्सीकारक विरोधी तत्व पाए जाते हैं।
- जैविक पशु उत्पादों एवं उनसे प्राप्त मूल्य–संवर्धित उत्पादों में संतृप्त वसीय अम्लों की तुलना में असंतृप्त–वसीय अम्लों की अधिकता होती है, जबकि परंपरागत विधि से प्राप्त पशु उत्पादों में असंतृप्त वसीय अम्लों की तुलना में संतृप्त वसीय अम्लों की अधिकता होती है। अतः जैविक पशु उत्पाद मानव स्वास्थ्य के लिए अधिक लाभकारी हैं।
- 94–100 प्रतिशत जैविक उत्पाद पीड़कनाशी रहित (सुरक्षित खाद्य–पदार्थ) पाए गए हैं।
- जैविक सब्जियों में नाइट्रेट की मात्रा 50 प्रतिशत कम होती है जो मानव स्वास्थ्य के लिए हितकर होता है।
- कई अनुसंधान परिणाम सिद्ध करते हैं कि परंपरागत कृषि से प्राप्त उत्पादों की तुलना में जैविक उत्पाद अधिक स्वादिष्ट होते हैं।
- आक्सीकारक–विरोधी (एंटी–ऑक्सीडेंट्स) तत्वों का मानव स्वास्थ्य बनाए रखने में अपूर्व सहयोग होता है। परंपरागत कृषि से प्राप्त उत्पादों की तुलना में जैविक उत्पादों में औसतन आक्सीकारक–विरोधी तत्वों की मात्रा 50 प्रतिशत अधिक होती है।

जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण सुरक्षा एवं मृदा उर्वरता

यदि सूखे यानी अनावृष्टि की स्थिति आती है तो निसंदेह परंपरागत खेती की तुलना में जैविक खेती द्वारा अधिक उत्पादन मिलेगा। चूंकि जैविक खेती के अंतर्गत मृदा में जैव (कार्बनिक) पदार्थ एवं मृदा स्वास्थ्य बेहतर होता है जिसके परिणामस्वरूप मृदा की जलधारण क्षमता बढ़ती है जो फसल को सूखा सहन करने में सहायक सिद्ध होता है। विस्कॉन्सिन समेकित फसल प्रणाली जांच (अमेरिका) के अनुसार सूखे की स्थिति वाले वर्षों में जैविक खेती से अधिक पैदावार तथा सामान्य वर्षा वाले वर्षों में जैविक एवं परंपरागत खेती दोनों में बराबर पैदावार प्राप्त हुई। अनुसंधान परिणाम दर्शाते हैं कि जैविक खेती प्रणालियों में जल का भी दक्ष उपयोग होता है। जैविक खेती अपनाने से मृदा में जैव पदार्थ की मात्रा में वृद्धि होती है जिसके परिणामस्वरूप उसकी जलधारण क्षमता में वृद्धि होती है और अंततः फसल की सूखे को बर्दाश्त करने की क्षमता की क्षमता में वृद्धि होती है।

जैविक खेती पर्यावरण सुरक्षा एवं मृदा उर्वरता वृद्धि में निम्न प्रकार से योगदान दे सकती है–

- जैविक खेती से हरितगृह गैसों (मीथेन, कार्बन–डाई–ऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड, सल्फर–डाई–ऑक्साइड) का कम उत्सर्जन होता है।
- मृदा से नाइट्रेट लीचिंग (निक्षालन) में कमी आती है जिससे भूमिगत जल की गुणवत्ता में सुधार आता है।
- मृदा में कार्बन का दीर्घकालीन संचयन होता है जो जलवायु में होने वाले परिवर्तनों के प्रभाव को कम करता है।
- जैविक खेती में मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणधर्मों में सुधार होता है।

जैव विविधता एवं जैविक खेती

जैविक खेती से जैव विविधता का चहुंमुखी विकास होता है। जैविक खेती में पोषक तत्व एवं पीड़क–प्रबंधन के लिए फसल विविधीकरण और फसल चक्रों पर विशेष जोर दिया जाता है जो मृदा के ऊपर एवं अंदर जैव विविधता को बढ़ाते हैं। मृदा के अंदर एवं बाहर रहने वाले मित्र कीटों एवं अन्य जीवों की संख्या में वृद्धि होती है, जबकि फसल के लिए हानिकारक जीवों की संख्या में कमी आती है। एक अनुसंधान में परंपरागत फार्म की तुलना में जैविक फार्म पर चमगादड़ों की अधिक संख्या पाई गई है।

जैविक खेती में फसल–चक्रों पर विशेष बल दिया जाता है। इन फसल–चक्रों में दलहनी और फलियों वाली फसलों को शामिल किया जाना चाहिए। साथ ही, समय–समय पर हरी खाद की फसलों को भी शामिल किया जाना चाहिए। फसल चक्रों में ऐसी फसलों को शामिल किया जाए जिनके लिए पर्याप्त विपणन सुविधाएं भी उपलब्ध हों। लगातार एक ही प्रकार की फसलों को उगाने से मिट्टी की उर्वराशक्ति में गिरावट आ जाती हैं। साथ ही, कीड़े–मकोड़ों, बीमारियों और खरपतवारों का नियंत्रण भी एक गंभीर समस्या बन जाता है। उदाहरण के लिए लगातार धान–गेंहू फसल–चक्र अपनाने से गेहुंसा (गुल्ली डंडा) खरपतवार की बढ़वार अधिक होती है जो गेहूं की पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। धान के कुछ कीट गेहूं की फसल को नुकसान पहुंचा सकते हैं। अतः ऐसी परिस्थिति में इस फसल–चक्र (धान–गेहूं) का विविधीकरण करके उपरोक्त समस्याओं का निवारण किया जा सकता है।

यदि संभव हो तो फसल–चक्र में हरी खाद को शामिल किया जा सकता हैं। हरी खाद लगाने से भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि होती है और अगली फसल के उत्पादन में भी बढ़ोतरी होती है। यदि हरी खाद का फसल–चक्र में समावेश संभव न हो तो युग्म–उद्देशीय दलहनी फसलों जैसे मूंग, लोबिया, उड़द, मटर और ग्वार आदि को उगाया जा सकता है। उपरोक्त फसलों से फलियों को अलग करने के बाद इनके अवशेषों को मिट्टी में मिलाया जा सकता है। इस प्रकार इन युग्म–उद्देशीय दलहनी फसलों को फसल–चक्र में शामिल करने से किसानों की आमदनी और मिट्टी की उर्वराशक्ति में बढ़ोतरी होगी। फसल–चक्र बनाते समय एक बात का ध्यान और रखना चाहिए कि फसलोत्पादन के साधानों का वर्षभर क्षमतापूर्ण ढंग से उपयोग हो सके। फसल–चक्र बनाते समय उसमें फसलों का समावेश ऐसा होना चाहिए कि सिंचाई, बीज, मजदूर, यंत्र आदि जो भी अपने पास उपलब्ध हों, उनका पूर्ण उपयोग हो और साथ ही, घरेलू आवश्यकता की सभी वस्तुएं, जैसे अनाज, दाल, सब्जी, चारा, रेशा तथा धन भी वर्ष भर उपलब्ध होता रहे।

फसल–चक्र में फसलों का चयल जलवायु, मृदा प्रबंधन और आर्थिक पक्ष पर निर्भर करता है। केवल अनुकूल परिस्थितियों में ही फसलों का उत्पादन लाभकर होता है। फसल अनुकूलन का सबसे अच्छा प्रमाण फसल की सामान्य वृद्धि तथा समान रूप से अधिक उपज देने की क्षमता है। इसके अलावा, फसल चक्र में ऐसी फसलों को शामिल किया जाए जिनको बेचने की पर्याप्त सुविधा हो, अर्थात उत्पादन की बाजार में अच्छी मांग हों और कृषक को उसे बेचकर अधिक लाभ की प्राप्ति हो। फसल चक्र अपनाने से जोखिम में कमी आती है, वर्षभर रोजगार मिलता है, संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग होता है, फसल सुरक्षा बनी रहती है, मृदा उर्वरता में वृद्धि होती है और सबसे महत्वपूर्ण है– जैव विविधता में वृद्धि।

जैविक खेती में पोषक तत्व प्रबंधन

जैविक खेती में पोषक तत्व प्रबंधन के लिए किसानों को निम्न तथ्यों पर ध्यान देना चाहिए–

- किसी भी कृत्रिम अथवा संश्लेषित उर्वरकों का प्रयोग वर्जित होता है।
- फसल–चक्रों में दलहनी एवं हरी खाद फसलों को शामिल करके।
- पोषक तत्वों की हानियों (मृदाक्षरण) को कम किया जाए।
- मृदा में भारी धातु (पारा, कैडमियम, आर्सेनिक) न पहुंचें।

- मृदा का सही पीएच मान बनाया जाए।
- अकृत्रिम अथवा प्राकृतिक खनिज उर्वरकों का प्रयोग (जिप्सम, रॉक फॉस्फेट) किया जा सकता है।
- कमपोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट (केंचुआ खाद), गोबर की खाद का प्रयोग लाभकारी होता है।
- फसल अवशेषों का प्रयोग।
- जैव उर्वरक (राइज़ोबियम, एजोस्पिरिलम, एजोटोबैक्टर, एजोटोमोनास, माइकोराइजा, पी.एस.बी., धान में नील–हरित शैवाल, आदि)।

पोषक तत्वों के मुख्य स्रोतों के बारे में संक्षेप में जानकारी इस प्रकार है :

- **हरी खादः** हरी खाद के लिए मुख्य रूप से दलहली फसलें उगाई जाती हैं। इनकी जड़ों में गांठे होती हैं इन ग्रंथियों में विशेष प्रकार के सहजीवी जीवाणु रहते हैं जो वायुमंडल में पाई जाने वाली नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करके मृदा में नाइट्रोजन की पूर्ति करते हैं। दलहनी फसलें मृदा की भौतिक दशा को सुधारने के अलावा उसमें जीवांश पदार्थ की मात्रा भी बढ़ाती हैं। दलहनी फसलें खरपतवारों को नियंत्रित करने में भी सहायक हैं। हरी खाद को दो प्रकार से तेयार किया जा सकता है। (1) हरी पत्तियों वाली हरी खाद– इसमें दूसरी जगह से पेड़–पौधों और झाड़ियों की हरी पत्तियों को एकत्र करके अन्य खेत में समान रूप से फैलाकर हैरो अथवा मिट्टी–पलट हल से मिट्टी में दबा दिया जाता है। यह कार्य मुख्य रूप से भारत के दक्षिणी और मध्य भागों में होता है। (2) फसल को खेत में उगाकर पलटना। इस विधि में जिस खेत में हरी खाद वाली फसलें उगाई जाती हैं, उसी खेत में उपयुक्त नमी में पुष्पावस्था–पूर्व मिट्टी–पलट हल से मिट्टी में दबा दिया जाता है। कभी–कभी हरी खाद को व्यावसायिक फसलों के बीच में उगाकर खाद के रूप में प्रयोग करते हैं। हरी खाद की फसलों में ढ़ेंचा, सनई, लोबिया तथा ग्वार इत्यादि मुख्य हैं।

सबसे जल्दी और कम समय में नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाली मुख्य फसल ढैंचा है। इसे धान की रोपाई से पूर्व ऊंचे एवं नीचे स्थानों पर उगा सकते हैं। ताजा हरी खाद की फसल मृदा में मिट्टी पलट हल से दबाने पर सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता तीव्र हो जाती है जिससे हरी खाद वाली फसल जल्दी सड़–गल जाती है और अगली फसल को नाइट्रोजन, कार्बन अनुपात, मृदा तापक्रम, मृदा में नमी और पौधों की आयु व प्रकार पर निर्भर करती हैं। इस प्रकार, हरी खाद वाली फसल को गलाने–सड़ाने में तीव्रता लाने के लिए मृदा में जैविक पदार्थ और कार्बनः नाइट्रोजन का अनुपात 15:1 और 25:1 के मध्य होना अति आवश्यक है। हरी खाद के प्रयोग से मृदा के भौतिक गुणों जैसे मृदा संरचना एवं नमी–धारण क्षमता में पर्याप्त सुधार होता है।

- **फसल अवशेषः** जैविक उत्पादन में फसल अवशेषों का विशेष योगदान हो सकता है। जैविक खेती में इन फसल अवशेषों का पुनर्चक्रीकरण करके लाभ प्राप्त किया जा सकता है। जैविक खेती से प्राप्त विभिन्न फसल अवशेषों जैसे गेहूं का भूसा, कपास के डंठल, गन्ने की सूखी पत्तियां तथा धान का भूसा इत्यादि की कुछ मात्रा का खेत में पुनर्चक्रण किया जा सकता है। कोई प्रयोगों व अनुसंधानों से यह सिद्ध हुआ है कि गेहूं व धान का भूसा डालने से उत्पादन बढ़े या नहीं परंतु भूमि उर्वरता पर अवश्य ही धनात्मक प्रभाव होता है। यद्यपि धान व गेहूं का भूसा डालने पर शुरू में पोषक तत्वों के स्थिरीकरण के कारण इनकी कमी हो जाती है परंतु इसके साथ किसी दलहनी फसल के भूसे को मिलाकर इस घटक को दूर किया जा सकता है। अतः फसल अवशेषों के प्रयोग से मृदा उर्वरता व उत्पादकता को बढ़ाकर संधारित उत्पादन के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सकता है।
- **जैव उर्वरकः** जैव उर्वरक विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवियों (जीवाणु, कवक, एक्टीनोमाइसिटिस आदि) की जीवित कोशिकाएं होती हैं। कुछ जैव उर्वरकों में नाइट्रोजन यौगिकीकरण व फॉस्फोरस को घोलने की क्षमता होती है जिससे मृदा में पोषक तत्वों को पौधों के लिए उपलब्ध कराया जाता है। पादप पोषण में पूरक, नवीकरणीय तथा पर्यावरणीय स्रोत के रूप में यह एक महत्वपूर्ण घटक हैं तथा जैविक पादप पोषण प्रबंधन का आवश्यक अंग हैं। भारत में इस समय इनके उत्पादन व प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। देश में अनेक जैव उर्वरक उत्पादन इकाईयां स्थापित की जा चुकी हैं जो इस क्षेत्र में काफी योगदान दे रही हैं। साथ ही, किसानों ने भी इनके उपयोग को समझा हैं जैव उर्वरकों के बढ़ते हुए उपयोग को देखकर इनकी उत्पादन तकनीक, संरक्षण व उपयोग की विधियों का मानकीकरण तथा विभिन्न कृषि भौगोलिक परिस्थितियों में विविध उपयोग के लिए उपयुक्त जानकारी की आवश्यकता है।

विभिन्न जैव उर्वरकों में फली वाली फसलों के लिए राइजोबियम का सबसे अधिक उपयोग हुआ है। इसके अपेक्षित परिणामों के लिए मृदा सबसे अधिक उपयोग हुआ है। इसके अपेक्षित परिणामों के लिए मृदा अथवा बीज में इनका सही प्रकार से उपयोग आवश्यक है। यद्यपि जैव उर्वरकों के परिणाम बहुत आनिश्चित होते हैं क्योंकि उनका स्वभाव जैविक तथा अजैविक वातावरण के प्रति बहुत ही संवेदनशील होता है। अतः इनसे पोषक तत्वों की पूर्ति को बढ़ाने के लिए अधिक प्रभावी, प्रतियोगी तथा प्रतिबल प्रतिरोधी किस्मों को विकसित करने की आवश्यकता है। फॉस्फोरस घुलनकारी जीवाणु तथा आरबसकुलर माईकोराइजा कवकों का सूक्ष्म तत्वों एवं फॉस्फोरस की उपलब्धता में महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है।

भारत में जैविक खेती के विकास में बाधाएं

- जैविक बीजों की कमी।
- किसान से उपभोक्ता तक कुशल विपणन प्रणाली का अभाव। अक्सर किसानों को कम मूल्य मिलता है और उपभोक्ता को अधिक कीमत चुकानी पड़ती है।
- कुछ मामलों में फसल की पैदावार में कमी आ जाती है, खासकर जैविक खेती अपनाने के आरंभ के कुछ वर्षों में। कई बार कम पैदावार मिलने से किसानों में जैविक खेती के प्रति मोह भंग हो सकता है हालांकि सर्वथा ऐसा नहीं है। उपयुक्त प्रशिक्षण प्राप्त करके एवं जैविक खेती की वैज्ञानिक विधियों को अपनाकर फसल उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है।
- रूपांतरण अवधि के दौरान कम आय जैविक खेती के प्रसार में बाधा बनती है।
- किसानों को जैविक उत्पादों की प्रीमियम कीमतों की अनुपलब्धता।
- फसल, मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों के लिए प्रौद्योगिकी पैकेजों का अभाव। जैविक उत्पादन प्रणालियों में खरपतवार, कीटनाशक और रोगों के प्रबंधन के लिए पर्यावरण–अनुकूल तकनीकों को विकसित करने के लिए और अधिक शोधों की आवश्यकता है।
- जैविक खाद और जैव उर्वरकों की सीमित उपलब्धता।
- प्रमाणीकरण प्रक्रियाओं में जटिलताएं एवं अधिक खर्च।
- जैविक क्षेत्र में संगठनों के बीच कमजोर संबंध।
- बुनियादी सुविधाओं का अभाव।
- कुछ आदानों की उच्च लागत।

जैविक खेती में कीटों, रोगों और खरपतवारों का प्रबंधन

जैविक खेती में पोषक तत्व प्रबंधन के लिए किसानों को निम्न तथ्यों पर ध्यान देना चाहिए–

- कृत्रिम पीड़कनाशियों (कीटनाशी, कवकनाशी, जीवाणुनाशी, शाकनाशी) का प्रयोग वर्जित रहता है।
- कृत्रिम वृद्धि नियामकों एवं रंगों का प्रयोग सर्वथा वर्जित है।
- आनुवांशिक रूप से निर्मित जीवों तथा उत्पादों का प्रयोग भी वर्जित है।
- निवारक एवं सस्य–विधियों का प्रयोग (बुवाई का समय एवं विधि, पादप संख्या, सिंचाई, फसल चक्र आदि)।
- कीटों एवं रोगों के प्राकृतिक शत्रुओं की संख्या बढ़ाने पर ध्यान।
- चिड़ियों के घोंसलों को नष्ट न किया जाए।
- अनुमत्त यांत्रिक एवं भौतिक विधियों (प्रकाश प्रपंच) विधियों का समुचित प्रयोग।
- शत्रु कीटों के जीवन–चक्र में बाधा उत्पन्न करना।
- आवश्यकतानुसार नीम के तेल का प्रयोग।
- कीटों अथवा खरपतवारों के परजीवी शिकारियों का प्रयोग।
- आवश्यकतानुसार सिरका, चूना, गंधक, हल्के खनिज तेल का प्रयोग।
- मशरूम और क्लोरेला के अर्क का प्रयोग।
- विषाणु विनिर्मित पदार्थ (एनपीवी) कवक विनिर्मित पदार्थ (ट्राइकोडर्मा), जीवाणु विनिर्मित पदार्थ (बेसिलस), परजीवी और परभक्षी आदि का आवश्यकतानुसार उपयोग।

सारांश

साधारणतया जैविक खेती में बाह्य फार्म निवेशों पर निर्भरता में कमी आती है, ऊर्जा उपयोग में कमी आती है, और कृषि आय में वृद्धि होती है। साथ ही मृदा, जल, वायु और पर्यावरण स्वास्थ्य में भी वृद्धि होती है। जैविक खेती अपनाने से मृदा की ऊपरी एवं आंतरिक जैव विविधता में वृद्धि होती है जिससे मृदा स्वास्थ्य में बढ़ोतरी होती है। जहां तक फसल उत्पादकता की बात है तो आरंभ के कुछ वर्षों में यह कम मिलती है। यदि जैविक खेती में उपयुक्त फसल पद्धतियों एवं समुचित फसल प्रबंधन को अपनाया जाए तो परंपरागत खेती के बराबर अथवा उससे अधिक फसल उपज की प्राप्ति की जा सकती है। अच्छी पैदावार लेने के लिए उचित फसल–चक्रों एवं फसल विविधीकरण को अपनाना आवश्यक है। साथ ही, उपयुक्त पोषक तत्व, कीट एवं रोग प्रबंधन भी जरूरी है।

भारत में कुछ विशेष क्षेत्रों, जलवायु एवं परिस्थितियों में जैविक खेती वरदान साबित हो सकती है। जैविक खाद्य पदार्थों की सुरक्षा और गुणवत्ता के बारे में उपभोक्ताओं की बढ़ती जागरूकता के साथ, कृषि प्रणाली की दीर्घकालिक स्थिरता और समान रूप से उत्पादक होने के प्रमाण देखते हुए जैविक खेती को अधिक संख्या में किसानों द्वारा अपनाया जाने वाला हे। जैविक उत्पादों का घरेलू और साथ ही अंतरराष्ट्रीय बाजार हाल के दिनों में काफी तेजी से बढ़ रहा है। इसके आर्थिक, सामाजिक, स्वास्थ्य और पर्यावरणीय लाभों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि सतत ग्रामीण विकास में इसके योगदान की अपार संभावनाएं हैं। ग्रामीण युवाओं के रोजगार के लिए एक महान अवसर जैविक उत्पादों और आदानों के उत्पादन, प्रसंस्करण और विपणन में मौजूद है। हालांकि, जैविक खेती में किसानों और अन्य हितधारकों को कई प्रकार की बाधाओं का सामना करना पड़ता है और इनको दूर करना भी महत्वपूर्ण है। भारत में किसानों की संख्या और रूचि को देखकर यह आसानी से महसूस किया जा सकता है कि भारत धीरे–धीरे लेकिन लगातार जैविक खेती की ओर बढ़ रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. दिनेश कुमार (सतत कृषि विकास में जैविक खेती की भूमिका)
2. डॉ. शालिनी फर्त्याल (भारत में जैविक प्रमाणीकरण एवं विपणन)
3. डॉ. राधा मोहन शर्मा (जैविक खेती से फल उत्पादन की संभावनाए)
4. डॉ. प्रवीण कुमार सिंह (सब्जियों की जैविक खेती)
5. डॉ. वीरेन्द्र कुमार (जैविक खेती की उन्नत तकनीके)
6. डॉ. निमिष कपूर (जैविक खेती के स्वास्थ्य और पर्यावरणीय लाभ)
7. डॉ. दीबा कामिल (जैविक खेती द्वारा खाद्यान्न फसलों का रोग प्रबंधन)
8. एस. एम. कण्डवाल (उत्तर–पूर्व में जैविक खेती का अवलोकन)
9. डॉ. अंशु राहल (जैविक खेती में महिलाओं की भागीदारी

❖◆❖